RESEARCH HUB – International Multidisciplinary Research Journal (RHIMRJ)
Research Paper

महात्मा गांधी और सरदार वल्लभभाई पटेल के राष्ट्रहित संबंधी विचार

गोविन्द सुथार

शोधार्थी, राजनीति विज्ञान जे.एन.वी.यू. जोधपुर

भारतीय परंपरा में दार्शनिक के दर्शन को उसके जीवन से जोड़ा जाता है और जिसने अपना जीवन अपने चिंतन के अनुरूप बिताया है, उसके चिंतन की अधिक वैधता स्वीकार की जाती है। गांधी इस अर्थ में एक बड़े चिन्तक थे क्योंकि उन्होंने अपने विचारों के अनुरूप अपने जीवन को व्यतीत करने की कोशिश की। उनके अनुसार अगर विचार एवं सिद्धान्त जीवन से जुड़े हुए नहीं है तो उनका कोई अर्थ नहीं है।गाँधी किसी भी परम्परागत दार्शनिक धारा का प्रतिनिधित्व नहीं करते हैं, वे एक नये प्रकार के दार्शनिक थे, जिन्होंने अपनी हर अवधारणा को व्यवहार को कसौटी पर कसा और उसमें संशोधन किया या उस पर और दृढ़ होकर लिखा। उन्होंने अपनी आत्मकथा को सही प्रकार से 'सत्य के प्रति मेरे प्रयोग' का शीर्षक दिया क्योंकि गाँधी हर विचार को व्यवहार की कसौटी पर कसना चाहते थे। वे मूलतया एक व्यावहारिक व्यक्ति थे।[1]

महात्मा गाँधी के अनुसार मेरा जीवन ही मेरा संदेश है। राजनीति के क्षेत्र में उन से अधिक पारदर्शी जीवन बिताने वाला शायद ही कोई राजनीतिज्ञ होगा। उन्होंने अपने जीवन में व्यक्तिगत एवं सार्वजनिक कार्यों में अन्तर नहीं किया। उनका जीवन जीवन खुली पुस्तक की तरह है।

गाँधी के विचारों को वैश्विक स्तर पर स्वीकार किया जाता है।

गाँधी के अनुसार राजनीति में भी नैतिकता होनी चाहिए। उन्होंने गोखले की ही भाँति राजनीति का आध्यात्मीकरण करना चाहा। उनके अनुसार राजनीति धर्म की अनुगामिनी है। धर्म से शून्य राजनीति मृत्यु का एक जाल है क्योंकि उससे आत्मा का हनन होता है। उन्होंनें धर्म को समन्वायत्मक दृष्टिकोण दिखलाया है। उनके अनुसार ''सभी धर्म समान नैतिक नियमों पर आधारित हैं। मेरा नैतिक धर्म उन नियमों से बनता है जो कि समस्त जगत में मनुष्यों को जोड़ता है।[2] गांधी का नैतिक धर्म मानव धर्म है। वे वस्तुतः कर्मयोगी थे।

गांधी राष्ट्रवाद के आदर्श के साथ गहरा अनुराग था। किन्तु वे अन्तर्राष्ट्रीयवादी भी थे। उनका कहना था कि अन्तर्राष्ट्रीयवाद के आदर्श को साकार करने से पहले उन देशों को भविष्य का निर्माण का निर्णय करने के लिये राजनीतिक स्वाधीनता के अन्तर्गत पड़े कष्ट भोग रहे हैं। वे राष्ट्रवाद को अन्तर्राष्ट्रीयवाद की एक व्यवस्था मानते थे। उनका कहना था कि जो घटक अन्तर्राष्ट्रीय संघ स्थापित करना चाहें वे अपनी स्वतन्त्र इच्छा से ऐसा करे और इसका अर्थ है कि पहले उन्हें राष्ट्रीय प्रभुत्व उपलब्ध होना चाहिए। किन्तु उनके अनुसार राष्ट्रवाद राजनीतिक विकास की चरम अवस्था नहीं हो सकता। वह साध्य नहीं है, एक बीच की व्यवस्था है। मैजीनी एवं अरविन्द की तरह गांधी ने स्वीकार किया कि राष्ट्रवाद, अन्तर्राष्ट्रीयवाद के मार्ग में एक आवश्यक कदम है। यद्यपि गांधी विश्व संघ के आदर्श पर मुग्ध नहीं थे, फिर भी उसे स्वीकार करने के लिए तैयार थे, शर्त यह थी कि उनका निर्माण तत्वतः अहिंसा के आधार पर होना चाहिए। वे इस बात से सहमत थे कि जब तक अहिंसा में विश्वास राष्ट्रों के पारस्परिक सम्बन्धों में शक्तिशाली तत्व का काम नहीं करने लगता, तब तक व्यवस्था कायम रखने के लिए एक विश्व पुलिस बल की स्थापना की जा सकती है।[3] गांधी का राष्ट्रवाद मानवतावादी एवं अन्तर्राष्ट्रीयवादी है। संकीर्ण राष्ट्रवाद या उग्र राष्ट्रवाद के समर्थक नहीं थे।

महात्मा गांधी 1893 से 1914 तक दक्षिण अश्वेतों एवं प्रवासी भारतीयों के हितों के लिए संघर्षरत एवं कार्यरत रहे। दक्षिण अफ्रीका में 1906 से 1914 तक चले आन्दोलन में वे भारतीय समुदाय के अग्रज नेता थे। श्वेत शासक भारतीयों का सम्मान स्तर एवं राजनीतिक सभा में सहभागिता देने से भयभीत थे। अतः अश्वेत प्रवासियों को अपनी ''शक्ति के एकाधिकार द्वारा पंगु बनाना ही उनके लिए हितकार एवं वांछित था। ऐसी स्थिति में ऐतिहासिक सत्याग्रह आन्दोलन का आरम्भ हुआ। अवश्य ही ''सत्याग्रह'' सिद्धान्त की राजनीति में क्रियात्मक प्रयुक्तिकरण का यह प्रयास था।[4] सत्याग्रह आन्दोलन को साधन रूप में क्रियान्वित कर दक्षिण अफ्रीका में सामाजिक समानता एवं न्याय की स्थापना का दायित्व राजनीति में गांधी शैली को उजागर करता है।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में सत्याग्रह नवविरोध गांधी को भारत आगमन के साथ ही संस्थाकृत स्वरूप ग्रहण कर लेता है। चम्पारन सत्याग्रह 1917 के द्वारा गांधी ने सत्याग्रह की राजनीतिक प्रभावोत्पादकता का निदेशन किया।[5] खेड़ा सत्याग्रह 1918

2016, RHIMRJ, All Rights Reserved *ISSN:* 2349-7637 (Online)

गांधी के विरोध की स्थापना का एक अन्य चरण था। सत्याग्रह का प्रयोजन था कि कृषकों को कर मुक्ति दिलाना क्योंकि अनावृष्टि से खेती नष्ट हो गयी थी।

महात्मा गांधी ने राजनीतिक मूल्यों को कर्म में उतारने का प्रयास किया। रौलेट एक्ट का विरोध 1919, असहयोग 1920–21 एवं सविनय अवज्ञा आन्दोलन (1930–34) के फलस्वरूप राष्ट्रीय आन्दोलन के आधार को दृढ़ता प्राप्त हुई, 1940–41 में द्वितीय महायुद्ध के समय गांधी ने व्यक्तिगत सत्याग्रह आन्दोलन प्रारम्भ किया और अन्त में विरोध का ऐतिहासिक आन्दोलन ''भारत छोड़ो आन्दोलन'' (1942) के रूप में अवतरित हुआ।

महात्मा गांधी ने प्रतिक्रियावादी शक्ति के विरूद्ध ''स्वतन्त्रता'' एवं ''अधिकारों'' की प्राप्ति की मांग की। गांधी के विरोध के साधन एवं स्रोत भौतिकवादी एवं राजनीतिक शक्ति संबद्धता से पर एवं दृढ़ इच्छा शक्ति में निहित थे। ''न्याय'' (सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक) की प्रतिस्थापना हेतु गांधी ''सत्य'', ''अहिंसा'' एवं अभय की सकारात्मक संस्थापना एवं प्रयुक्तिकरण के वृहत चिन्तन वृत्त से संयुक्त थे। इसी कारण गांधी के ''स्वराज'' की अवधारणा आर्थिक स्वायत्तता मात्र न होकर न्याय का आह्वान था। ''न्याय'' के प्रति गांधी की प्रतिबद्धता गांधी के दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह के समय सामने आयी वहां के सरकारी कर्मचारियों की हड़ताल की स्थिति में सत्याग्रह आन्दोलन का स्थगन गांधी के लिये न्यायोचित निर्णय था। यह गांधी का असहाय से अनुचित लाभ न उठाने के प्रति संकल्पबद्धता का द्योतक था। गांधी की दृष्टि में ''न्याय'' मानव आत्मा की अनिवार्यता है। सत्याग्रह के अनन्य मूल्य में ''विजय'' ''पराजय'' से परे, सत्य, अहिंसा एवं अभयपूरित दृढ़ संकल्प को प्राथमिकता, गांधी के चिन्तन एवं कर्मण्यता स्पष्ट दिख पड़ती है।

गांधी के विचारों में मौलिकता, नियमितता एवं सूत्रबद्धता के विषय में मत मतान्तर हो सकते हैं। आवश्यक तत्व यह है कि गांधी ने व्यक्तिगत विचारों को केवल वैचारिक पक्ष तक ही सीमित न रखकर उन्हें जीवन के व्यवहारिक आचरण में उतारने का प्रयास किया। इसी में गांधी की ''नवीनता'' एवं ''कर्मण्यता'' समाहित है।

महात्मा गांधी ने किसी कर्मण्यवादी की भांति पत्रकारिता, पत्र व्यवहार, लेखन एवं व्यवहारिक योगदान सभी का समायोजन करने का प्रयास किया। गांधी की कृतियों के संकलन उपलब्ध हैं, जिनके अध्ययन से अनेक मुद्दों को समझा जा सकता है। उनकी प्रमुख कृतियों में ''हिन्द स्वराज्य'', आत्मकथा (सत्य के प्रयोग) ''दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह'', ''सर्वोदय'' एवं ''यंग इण्डिया'' को इंगित किया जा सकता है।

एक कर्मण्यवादी के रूप में गांधी विचार बद्धता के बंदी नहीं रह सकते थे। गांधी की महत्ता उनकी प्रतिबद्धता एवं नैतिक प्रकृति, राजनीतिक एवं नैतिक नेतृत्व, आत्मिक अंतः करणीय अभिव्यक्तिकरण, आत्मानुभूति एवं दैवीय संदेश में निहित है।[6]

महात्मा गांधी करिश्मावादी अधिसत्ता के प्रतीक थे।[7] गांधी ने इस इस अधिसत्ता की प्राप्ति राजनीति में सक्रिय होते हुए भी अपनी नैतिकता से प्राप्त की जिसके अन्तर्गत सहिष्णुता, सहनशीलता एवं प्रतिबद्ध मानववादी मूल्यों का प्रधान्य था। गांधी करिश्मावादी इसलिए भी थे चूंकि उनकी कर्मण्यता का आधार उनका स्वयं का ''नैतिक'' व ''आध्यात्मिक'' अनुशासन था। राजनीति में प्रत्येक कृत्य का ''नैतिकता'' तथा ''आध्यात्मिकता'' से परिपूरित करना ही गांधीवाद का आधार है।[8]

महात्मा गांधी ने ''हिन्दू–मुस्लिम एकता'', ग्रामोत्थान एवं पुनर्निर्माण, खादी व कुटीर उद्योगों को, जो स्वावलम्बन एवं स्वाभिमान के तथा आवश्यकता परिसीमन के प्रतीक हैं, के द्वारा अस्पृश्यता उन्मूलन एवं स्वतन्त्रता प्राप्ति के अग्रज की भूमिका निभायी। गांधी प्राचीन भारतीय मूल्यों आध्यात्मिकता, नैतिकता आववश्यकता, परिसीमन एवं त्याग व सरलता की समन्वयता के प्रतीक थे। वशिष्ठ, बुद्ध, महावीर की परम्पराओं के मध्य संयोजक के रूप में भी उनको देखा जा सकता है। गांधी की अजेय नेतृत्वकारी शक्ति को आत्म त्याग की प्रवृत्ति ने सम्बल प्रदान किया एवं जनमानस की मानसिकता को छापा।

महात्मा गांधी ने यदि विरोध व्यक्त किया तो प्रत्येक विरोध स्थिति में संकल्प भी प्रस्तुत किये। अन्याय, दमन एवं शोषण तथा मानव अधिकारों के उल्लंघन का विरोध स्पष्ट रूप से उनके चिन्तन में परिलक्षित होता है। गांधी को दक्षिण अफ्रीका एवं भारत में विभिन्न चुनौतियों का सामना करना पड़ा। दक्षिण अफ्रीका का सन्दर्भ भिन्न होने के कारण वहां राष्ट्रवाद के स्थान पर ''समान अधिकारों'' की मांग महत्वपूर्ण थी। श्वेत प्रजातिवाद का विरोध नैतिक दायित्व था। यहीं गांधी के विचार चिन्तन व कर्मण्यता का जन्म हुआ। वहां गांधी वैचारिक आधार प्राप्त कर चुके थे। सत्याग्रह एवं अहिंसा के परीक्षण गांधी द्वारा व्यवहारिक कसौटी पर परखे जा चुके थे। भारत के स्वतन्त्रता आन्दोलन में भी गांधी द्वारा उनकी क्रियान्विति की गई। नीतिपरकता, सत्य, अहिंसा तथा मानवीय आधारों पर दक्षिण अफ्रीका एवं भारत में चलाये गये आन्दोलन को गांधी ने नवीन स्वरूप प्रदान किया।

इन मूल्यों की क्रियान्विति हेतु गांधी ने विशिष्ट साधनों का प्रयोग किया।

सरदार वल्लभभाई पटेल स्पष्ट वक्ता थे। यदि इस स्पष्टवादिता पर भीतर–बाहर से विचार किया जाय तो यह गुण भी है, और दोष भी। स्पष्टवादिता यद्यपि गंभीरता और विवेक की कमी को सूचित करती है, किन्तु वल्लभभाई इसके भी अपवाद थे। वैसे वह बोलते बहुत कम थे, किन्तु जब बोलते थे तो हृदय खोलकर रख देते थे। वल्लभभाई बोलते कम थे, करते अधिक थे। वाक्शूर उन्हें लुभा नहीं सकते थे। उन्हें व्याख्यान झाड़ने का व्यसन नहीं था, आत्म–प्रदर्शन पसन्द नहीं था, भले ही उससे अच्छा काम

बनता हो। विज्ञापनबाजी भी उन्हें पसन्द नहीं थी। और थी भी, तो आवश्यकता भर, बहुत कम। उसमें भी व्यक्तित्व का विज्ञापन तो लेशमात्र भी नहीं।

पटेल नैतिक आधार पर नहीं बल्कि व्यावहारिक आधार पर सशस्त्र आन्दोलन को नकारते थे। पटेल का मानना था कि यह विफल रहेगा और इसका जबरदस्त दमन होगा। गांधी की भाँति पटेल भी भविष्य में ब्रिटिश राष्ट्रकुल में भारत की भागीदारी को एक स्वतंत्र एवं बराबरी के सदस्य के रूप में शामिल करने के पक्षधर थे। वे भारत में आत्मनिर्भरता और आत्मविश्वास कायम करने पर जोर देते थे।

पटेल गतिरोधों को समाप्त करके शांतिपूर्वक तरीके से समस्याओं को हल करने के पक्षधर थे। वे विवादों में पड़ने के स्थान पर उस विवाद को अव्यवहारिक समझकर त्याग देते थे। बलपूर्वक आर्थिक और सामाजिक बदलाव लाने की आवश्यकता के बारे में पटेल जवाहरलाल नेहरू से असहमत थे। पारम्परिक हिन्दू मूल्यों से उपजे रूढ़िवादी पटेल ने भारत की सामाजिक और आर्थिक संरचना में समाजवादी विचारों को अपनाने की उपयोगिता का उपहास किया। वह मुक्त उद्यम में यकीन रखते थे। इस प्रकार उन्हें रूढ़िवादी तत्वों का विश्वास प्राप्त हुआ तथा उनसे प्राप्त धन से ही भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की गतिविधियाँ संचालित होती रहीं।

सरदार पटेल ने रियासतों के प्रति अपनी नीति स्पष्ट रखते हुए रियासतों को तीन विषयों–सुरक्षा, विदेश तथा संचार व्यवस्था के आधार पर भारतीय संघ में शामिल किया।भारतीय एकता के पक्षधर पटेल ने अपने अदम्य साहस और कूटनीति की बदौलत भारत को एक संघ के रूप में स्थापित किया।

गांधीजी के कुशल नेतृत्व में सरदार पटेल का स्वतन्त्रता आन्दोलन में योगदान उत्कृष्ट एवं महत्त्वपूर्ण रहा है।उनमें कई ऐसे गुण थे जो उन्हें एक आदर्श शख्सियत बनाते थे, जैसे अनुशासनप्रियता, अपूर्व संगठन–शक्ति, शीघ्र निर्णय लेने की क्षमता विशेष रूप से थी।

आजादी के बाद भारत को एक अखंड स्वरूप देने में राष्ट्रीय एकीकरण में लौह पुरूष सरदार वल्लभ भाई पटेल के योगदान को भुलाया नहीं जा सकता और माना जाता है कि उनके जैसे धैर्यवान और दूरदर्शी नेतृत्व के कारण ही छोटी–छोटी रियासतों में बँटे भारत को एकजुट किया जा सका था। सरदार पटेल के बारे में बताते हुए दिल्ली विश्वविद्यालय के हंसराज कॉलेज में इतिहास के प्रोफेसर डॉक्टर शरदेंदु मुखर्जी कहते हैं, ''पटेल दूरदर्शी सोच और व्यावहारिक दृष्टिकोण वाले नेता थे। तभी वे भारत के एकीकरण की बड़ी समस्या को इतने कम समय में हल कर सके थे।''[9] एक अनुशासित व्यक्तित्व के स्वामी सरदार पटेल ने वी. पी. मेनन समेत कई सहयोगियों की मदद से 500 से भी ज्यादा रियासतों को भारतीय संघ में शामिल होने के लिए मना लिया था। इनमें से अधिकांश रियासतों ने आजादी की पूर्व संध्या से पहले ही 'भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम 1947' पर हस्ताक्षर कर दिए थे। इस ऐतिहासिक एकीकरण के चलते ही भारत को आजादी खंडित टुकड़ों के बजाय एक अखंड राष्ट्र के रूप में मिल सकी।

आजादी की घोषणा होने के बाद भारत में मौजूद सैकड़ों छोटी–बड़ी रियासतों की एकसाथ मिलाना सबसे मुश्किल काम था। इस मुश्किल की तीन मुख्य वजहें अधिकांश रियासतों में खुद को स्वतंत्र देश बनाने की चाह, नेहरू के नेतृत्व के प्रति राजाओं में संशय और पाकिस्तान के साथ मिल जाने का विकल्प मौजूद होना थी। इस मुश्किल स्थिति में पटेल के व्यक्तित्व की एक–एक खूबी काम में आई और उन्होंने इन रियासतों के एकीकरण के लिए अपनी हर तरकीब लगा दी। वे एक ओर इन राजाओं के लिए विशेष भोज आयोजित कर रहे थें वहीं दूसरी ओर राजकीय फैसलों में दखल रखने वाले दीवान लोगों को पत्र लिखकर राजा को मनाने के लिए जोर डाल रहे थे।

उनके नेतृत्व के प्रभाव का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि 1946 में कांग्रेस प्रेसीडेंसी के चुनावों में उन्हें राज्यों के 16 प्रतिनिधियों में से 13 का समर्थन मिला था।इन चुनावों को जीतने के बाद आजाद भारत का प्रधानमंत्री बनना लगभग तय था लेकिन पटेल ने गांधीजी के कहने पर प्रधानमंत्री बनने का विचार छोड़ दिया। इस पूरे दौर में ही पटेल और नेहरू के बीच कई मसलों को लेकर मतभेद रहे लेकिन उन्होंने राष्ट्रहित में इन मतभेदों को दरकिनार कर दिया था। इस बारे में राजनैतिक विश्लेषक और समाजविद् धीरूभाई सेठ कहते हैं, ''अगर पटेल चाहते तो वे देश के पहले प्रधानमंत्री बन सकते थे लेकिन उन्होंने ऐसी किसी महत्त्वाकांक्षा को राष्ट्रहित पर हावी नहीं होने दिया। देश के पहले गृहमंत्री व उप प्रधानमंत्री बनकर उन्होंने देश को एक संगठित राष्ट्र की विरासत दी।''[10]

सरदार वल्लभभाई पटेल राष्ट्रीय एकता के अद्भूत शिल्पी थे जिनके हृदय में भारत बसता था। वास्तव में वे भारतीय जनमानस अर्थात् किसान की आत्मा थे। स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी एवं स्वतन्त्र भारत के प्रथम गृहमंत्री सरदार पटेल बर्फ से ढँके एक ज्वालामुखी थे। वे नवीन भारत के निर्माता थे। उन्हें भारत का 'लौहपुरूष' भी कहा जाता है।

वर्तमान समय में विश्व को आतंकवाद, कोरोना जैसी महामारी (जो प्रकृति से छेड़खानी से हुई), अशान्ति, परमाणु बम इत्यादि समस्याओं का समाधान गाँधीवाद में ही निहित है। गांधी ने कहा कि प्रकृति हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकती है, इच्छाओं की नहीं। हिंसा का मुकाबला अहिंसा से ही सम्भव है तथा अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं का हल बोली से हो सकता है, गोली

से नही। इसलिए हमें विश्व को बचाना है तो गांधीवादी की तरफ ही देखना होगा।आज एक तरफ संयुक्त राष्ट्र संघ में हर वर्ष गांधी जयन्ती को अन्तर्राष्ट्रीय अहिंसा दिवस के रूप में मनाया जाता है, विश्व शांति के लिए गांधी आज ज्यादा प्रासंगिक है, वही दूसरी तरफ भारत के स्वतन्त्रता आन्दोलन और राष्ट्रीय एकीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले सरदार वल्लभभाई पटेल का जन्मदिवस राष्ट्रीय एकता के रूप में मनाया जाता हैं।

सन्दर्भ सूची –

1. नरेश दाधीच, महात्मा गांधी का चिन्तन, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2014 पृष्ठ संख्या 82
2. रोम्या रोलां, महात्मा गांधी, लन्दन, 1924, पृष्ठ 28
3. डॉ. वी. पी. वर्मा, आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा, 1989, पृष्ठ 363
4. मैक्स वेबर ने करिश्मावादी अधिसत्ता को ''अथॉरिटी'' का एक प्रकार बताया है।
5. वी. पी. वर्मा, ''गांधी एण्ड मॉर्क्स, इण्डियन जनरल ऑफ पॉलिटिकल साइन्स'', जून, 1954
6. रोम्या रोलां, महात्मा गांधी, लन्दन, 1924, पृष्ठ 55–56,
7. नोट – 6 पृष्ठ 41
8. आत्मकथा, पृष्ठ 90
9. प्रो. गोविन्दकुमार टी. वेकरीया, लौहपुरूष सरदार बल्लभभाई पटेल, रावत प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 120
10. प्रो. गोविन्दकुमार टी. वेकरीया, लौहपुरूष सरदार बल्लभभाई पटेल, रावत प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 121

2016, RHIMRJ, All Rights Reserved

ISSN: 2349-7637 (Online)